वैदिक एवं श्रमण परम्परा में चित्त की विशुद्धि

अशोक कुमार

भारतीय संस्कृति के मनीषी चाहे वे वैदिक परम्परा के हों अथवा श्रमण परम्परा के, सबने चित्त शुद्धि के क्षेत्र में पर्याप्त ऊहापोह की है। दोनों ही परम्परा में साधना को एक अनुष्ठान (कर्मकाण्ड) न मानकर आन्तरिक साधना माना गया है, जिसकी सहायता से मनुष्य के व्याकुल हृदय, अस्थिर चित्त या उद्विग्न मन को शान्ति करने का प्रयत्न किया जाता है। यह माना गया है कि मोक्ष–मुक्ति, कैवल्य, विशुद्धि जैसे सर्वोच्च आध्यात्मिक मूल्य को ध्यानाभ्यास के द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। आज के वैज्ञानिक युग में तकनीकी विकास के द्वारा प्राप्त गतिशीलता ने मानव की चित्तवृत्ति को जो अस्थिरता दी है और जिसके कारण वह तनावग्रस्त होता जा रहा है उस वृत्ति को स्थिरता और सन्तुलन का काम भी ध्यान कर सकता है।

मानव का परम पुरुषार्थ सच्चे सुख और शान्ति को प्राप्त करना है। परम शान्ति द्वन्द्व के मिटने से ही प्राप्त होती है और राग–द्वेषरूप कामना के विसर्जन होने पर ही द्वन्द्व मिटते हैं। राग–द्वेष, कामनादि द्वन्द्व मनुष्य की विभिन्न वृत्तियों के परिचायक माने गये हैं।